

भगवान महावीर

के

श्रावक दस

सम्यक्त्व सहित अणुव्रतों को धारण करने वाला, प्रति दिन पञ्च महाव्रतधारी साधुओं के पास शास्त्र श्रवण करने वाला श्रावक कहलाता है। अथवा–

श्रद्धालुता श्राति शृणोति शासन।
दान वपेदाशु वृणोति दर्शनम् ॥
कृन्तत्यपुण्यानि करोति संयम।
त श्रावक प्राहुरमी विचक्षणाः ॥

अर्थात्– वीतराग प्ररूपित तत्त्वों पर दृढ श्रद्धा रखने वाला, जिनवाणी को सुनने वाला, पुण्य मार्ग में द्रव्य का व्यय करने वाला, सम्यग्दर्शन को धारण करने वाला, पाप को छेदन करने वाला देशविरति श्रावक कहलाता है। भगवान् महावीर स्वामी के मुख्य श्रावक दस हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं–

(१) आनन्द (२) कामदेव (३) चुलनीपिता (४) सुरादेव (५) चुल्लशतक (६) कुण्डकोलिक (७) सद्दालपुत्त (सकडालपुत्र)

(८) महाशतक (९) नन्दिनीपिता (१०) मालिहिपिया (शालेयिका पिता)। इन सब का वर्णन उपासकदशाग सूत्र में है। उसके अनुसार यहाँ दिया जाता है।

(१) आनन्द श्रावक– इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में भारतभूमि का भूषणरूप वाणिज्य नाम का एक ग्राम था। वहाँ जितशत्रु राजा राज्य करता था। उसी नगर में आनन्द नाम का एक सेठ रहता था। कुबेर के समान वह ऋद्धि सम्पत्तिशाली था। नगर में वह मान्य एव प्रतिष्ठित सेठ था। प्रत्येक कार्य में लोग उसकी सलाह लिया करते थे। शील सदाचारादि गुणों से सुशोभित शिवानन्दा नाम की उसकी पत्नी थी। आनन्द के पास चार करोड़ (कोटि) सोनैया निधानरूप अर्थात् खजाने में था, चार करोड़ सोनैय का विस्तार (द्विपद, चतुष्पद, धन, धान्य आदि की सम्पत्ति) था और चार करोड़ सोनैये से व्यापार किया जाता था। गायों के चार गोकुल (एक गोकुल में दस हजार गायें होती हैं) थे। वह धर्मिष्ठ और न्याय से व्यापार चलाने वाला तथा सत्यवादी था।। इसलिए राजा भी उसका बहुत मान करता था। उसके पाँच सौ गाड़े व्यापार के लिए विदेश में फिरते रहते थे और पाँच सौ घास वगैरह लाने के लिए नियुक्त किये हुए थे। समुद्र में व्यापार करने के लिए चार बड़े जहाज थे। इस ऋद्धि से सम्पन्न आनन्द श्रावक अपनी पत्नी शिवानन्दा के साथ आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करता था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वाणिज्य ग्राम के बाहर उद्यान में पधारे। देवताओं ने भगवान् के समवसरण की रचना की। भगवान् के पधारने की सूचना मिलते ही जनता वन्दना के लिये गई। जितशत्रु राजा भी बड़ी धूमधाम और उत्साह के साथ भगवान् को वन्दना करने के लिये गया। खबर पाने पर आनन्द

इस प्रकार विचार करने लगा कि अहो ! आज मेरा सद्भाग्य है। भगवान् का नाम ही पवित्र एवं कल्याणकारी है तो उनके दर्शन का तो कहना ही क्या ? ऐसा विचार कर उसने शीघ्र ही स्नान, किया, सभा में जाने योग्य शुद्ध वस्त्र पहने, अल्प भार और बहुमूल्य वाले आभूषण पहने। वाणिज्य ग्राम के बीच में से होता हुआ आनन्द सेठ द्युतिपलाश उद्यान में, जहाँ भगवान् विराजमान थे, आया। तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना नमस्कार कर बैठ गया। भगवान् ने धर्मोपदेश फरमाया। धर्मोपदेश सुन कर जनता वापिस चली गई किन्तु आनन्द वहीं पर बैठा रहा। हाथ जोड़ कर विनय पूर्वक भगवान् से अर्ज करने लगा कि हे भगवन् ! ये 'निर्ग्रन्थ प्रवचन मुझे विशेष रुचिकर हुए हैं। आपके पास जिस तरह बहुत से राजा, महाराजा, सेठ, सेनापति, तलवर, कौडम्बिक, माडम्बिक, सार्थवाह आदि प्रव्रज्या अङ्गीकार करते हैं उस तरह प्रव्रज्या ग्रहण करने में तो मैं असमर्थ हूँ। मैं आपके पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार करना चाहता हूँ। भगवान् ने फरमाया कि जिस तरह तुम्हें सुख हो वैसा कार्य करो किन्तु धर्म कार्य में विलम्ब मत करो।

इसके बाद आनन्द गाथापति ने श्रमण भगवान् महावीर के पास निम्न प्रकार से व्रत अङ्गीकार किए।

दो करण तीन योग से स्थूल प्राणातिपात, स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान का त्याग किया। चौथे व्रत में स्वदार संतोष व्रत की मर्यादा की और एक शिवानन्दा भार्या के सिवाय बाकी दूसरी सब स्त्रियों के साथ मैथुन का त्याग किया। पाँचवें व्रत में धन, धान्यादि की मर्यादा की। बारह करोड़ सौनैया, गायों के चार गोकुल, पाँच सौ हल और पाँच सौ हलों से जोती जाने वाली भूमि, हजार गाड़े और चार बड़े जहाज के उपरान्त

परिग्रह रखन का नियम लिया। रात्रिभोजन का त्याग किया।

सातवें व्रत में उपभोग परिभोग की मर्यादा की जाती है। एक ही बार भोग करने योग्य भोजन, पानी आदि पदार्थ उपभोग कहलाते हैं। बारबार भोगे जाने वाले वस्त्र, आभूषण और स्त्री आदि पदार्थ परिभोग कहलाते हैं। इन दोनों का परिमाण नियत करना उपभोग परिमाण व्रत कहलाता है। यह व्रत दो प्रकार का है एक भोजन में और दूसरा कर्म में।

उपभोग करने योग्य भोजन और पानी आदि पदार्थों का तथा परिभोग करने योग्य पदार्थों का परिमाण निश्चित करना अर्थात् अमुक अमुक वस्तु को ही मैं अपने उपभोग परिभोग में लूँगा, इन से भिन्न पदार्थों को नहीं, ऐसी संख्या नियत करना भोजन से उपभोग परिभोग व्रत है। उपरोक्त पदार्थों की प्राप्ति के लिए उद्योग धन्धों का परिमाण करना अर्थात् अमुक अमुक उद्योग धन्धों से ही मैं इन वस्तुओं का उपार्जन करूँगा दूसरे कार्यों से नहीं, यह कर्म से उपभोग परिभोग व्रत कहलाता है। आनन्द श्रावक ने निम्न प्रकार से मर्यादा की—

(१) उल्लणियाविहि—स्नान करने के पश्चात् शरीर को पोंछने के लिए गमछा (डवाल) आदि की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने गन्धकाषायित (गन्ध प्रधान लाल वस्त्र) का नियम किया था।

(२) दन्तवणविहि—दाँत साफ करने के लिए दाँतुन का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने हरी मुलहटी का नियम किया था।

(३) फलविहि—स्नान करने के पहले शिर धोने के लिए आवला आदि फलों की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने जिस में गुठली उत्पन्न न हुई हो ऐसे आवलों का नियम किया था।

(४) अब्भंगणविहि—शरीर पर मालिश करने योग्य तेल आदि का परिमाण निश्चित करना। आनन्द श्रावक ने शतपाक (सौ

औषधियाँ डाल कर बनाया हुआ) और सहस्रपाक (हजार औषधियाँ डाल कर बनाया हुआ) तेल रखा था।

(५) उव्वट्टणविहि–शरीर पर लगाए हुए तेल को सुखाने के लिए पीठी आदि की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने कमलों के पराग आदि से सुगन्धित पदार्थ का परिमाण किया था।

(६) मज्जणविहि–स्नानों की संख्या तथा स्नान करने के लिए जल का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने स्नान के लिए आठ घड़े जल का परिमाण किया था।

(७)वत्थविहि–पहनने योग्य वस्त्रों की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने कपास से बने हुए दो वस्त्रों का नियम किया था।

(८) विलेवणविहि–स्नान करने के पश्चात् शरीर में लेपन करने योग्य चन्दन, केशर आदि सुगन्धित द्रव्यों का परिमाण निश्चित करना। आनन्द श्रावक ने अगुरु (एक प्रकार का सुगन्धित द्रव्य विशेष), कुंकुम, चन्दन आदि द्रव्यों की मर्यादा की थी।

(९) पुप्फविहि–फूलमाला आदि का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने शुद्ध कमल और मालती के फूलों की माला पहनने की मर्यादा की थी।

(१०) आभरणविहि–गहने, जेवर आदि का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने कानों के श्वेत कुण्डल और स्वनामाङ्कित (जिस पर अपना नाम खुदा हुआ हो ऐसी) मुद्रिका अंगूठी धारण करने का परिमाण किया था।

(११) धूवविहि–धूप देने योग्य पदार्थों का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने अगर और लोबान आदि का परिमाण किया था।

(१२) भोयणविहि–भोजन का परिमाण करना।

(१३) पेज्जविहि–पीने योग्य पदार्थों की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने मूँग की दाल और घी में भुने हुए चावलों

की रात की मर्यादा की थी।

(१४) भक्खणविहि–खाने के लिए पक्वान्न की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने घृतपूर (घेवर) और खाड से लिप्त खाने का परिमाण किया था।

(१५) ओदणविहि– क्षुधा निवृत्ति के लिए चावल आदि की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने कमोद चावल का परिमाण किया था।

(१६) सूवविहि– दाल का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने मटर, मूँग और उड़द की दाल का परिमाण किया था।

(१७) घय विहि– घृत का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने गायों के शरद ऋतु में उत्पन्न घी का नियम किया था।

(१८) सागविहि– शाक भाजी का परिमाण निश्चित करना। आनन्द श्रावक ने बथुआ, चूचू (सुस्थिय) और मण्डुकी शाक का परिमाण किया था। चूचू और मण्डुकी उस समय में प्रसिद्ध कोई शाक विशेष हैं।

(१९) माहुरयविहि– पके हुए फलों का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने पालङ्ग (बेल फल) फल का परिमाण किया था।

(२०) जेमणविहि– बड़ा, पकौड़ी आदि खाने योग्य पदार्थों का परिमाण निश्चित करना। आनन्द श्रावक ने तेल आदि में तलने के बाद छाछ, दही और काजी आदि खट्टी चीजों में भिगोये हुए मूंग आदि की दाल से बने हुए बड़े और पकौड़ी आदि का परिमाण किया था। आज कल इसी को दही बड़ा, काजी बड़ा और दालिया आदि कहते हैं।

(२१) पाणियविहि– पीने के लिए पानी की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने आकाश से गिरे हुए और तत्काल (टाकी आदि में) ग्रहण किए जल की मर्यादा की थी।

(२२) मुहवासविहि– अपने मुख को सुवासित करने के लिए पान और चूर्ण आदि पदार्थों का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने पञ्चसौगन्धिक अर्थात् लौंग, कपूर, कक्कोल (शीतल चीनी), जायफल और इलायची डाले हुए पान का परिमाण किया था।

इस के बाद आनन्द श्रावक ने आठवें अनर्थ दण्ड व्रत को अंगीकार करते समय नीचे लिखे चार कारणों से होने वाले अनर्थ दण्ड का त्याग किया–(क) अपध्यानाचरित–आर्त्तध्यान या रौद्रध्यान के द्वारा अर्थात् दूसरे को नुक्सान पहुँचाने की भावना या शोक चिन्ता आदि के कारण व्यर्थ पाप कर्मों को बाँधना। (ख) प्रमादाचरित–प्रमाद अर्थात् आलस्य या असावधानी से अथवा मद्य, विषय, कषायादि प्रमादों द्वारा अनर्थ दण्ड का सेवन करना। (ग) हिंस्रप्रदान– हिंसा करने वाले शस्त्र आदि दूसरे को देना। (घ) पापकर्मोपदेश– जिस में पाप लगता हो ऐसे कार्य का उपदेश देना।

इसके बाद भगवान् ने आनन्द श्रावक से कहा कि हे आनन्द! जीवाजीवादि नौ तत्त्वों के ज्ञाता श्रावक को समकित के पाँच अतिचारों को, जो कि पाताल कलश के समान हैं, जानना चाहिए किन्तु इनका सेवन नहीं करना चाहिए। वे अतिचार ये हैं– सङ्का, कंखा, वितिगिच्छा, परपासंडप्पसंसा, परपासंड-संथवो। इन पाँच अतिचारों की विस्तृत व्याख्या इसके प्रथम भाग बोल नं० २८५ में दे दी गई है।

इसके बाद बारह व्रतों के साठ अतिचार बतलाए। उपासक दशाङ्ग सूत्र के अनुसार उन अतिचारों का मूल पाठ यहाँ दिया जाता है–

(१) तयाणन्तरं च णं थूलगस्स पाणाइवायवेरमणस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा पेयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा,

तंजहा– बन्धे वहे छविच्छेए अइभारे भत्तपाणवोच्छेए। (२) तयाणन्तरं च णं थूलगस्स मुसावाय वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा-सहसाअब्भक्खाणे रहसाअब्भक्खाणे सदारमन्तभेए मोसोवएसे कूडलेहकरणे।(३) तयाणन्तरं च णं थूलगस्स अदिण्णादाण वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा– तेणाहडे तक्करप्पओगे विरुद्धरज्जाइक्कमे कूडतुलकूडमाणे तप्पडिरूवगववहारे।(४)तयाणन्तरं च णं सदारसन्तोसिए पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा– इत्तरियपरिग्गहियागमणे अपरिग्गहियागमणे अणङ्गकीड़ा परविवाहकरणे कामभोगतिव्वाभिलासे । (५) तयाणन्तरं च णं इच्छापरिमाणस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा खेत्तवत्थुपमाणाइक्कमे हिरण्णसुवण्णपमाणाइक्कमे दुपयचउप्पयपमाणाइक्कमे धणधन्नपमाणाइक्कमे कुवियपमाणाइक्कमे।(६) तयाणन्तरं च णं दिसिवयस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा- उड्ढदिसिपमाणाइक्कमे अहोदिसिपमाणाइक्कमे, तिरियदिसिपमाणाइक्कमे खेत्तवुड्ढी सइअन्तरद्धा। (७) तयाणन्तरं च णं उवभोगपरिभोग दुविहे पण्णत्ते, तंजहा– भोयणओ य कम्मओ य, तत्थ णं भोयणओ समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तंजहा–सचित्ताहारे सचित्तपडिबद्धाहारे अप्पउलिओसहिभक्खणया दुप्पउलिओसहिभक्खणया तुच्छोसहिभक्खणया कम्मओ णं समणोवासएणं पन्नरस* कम्मादाणाइं जाणियव्वाइं न समायरियव्वाइं, तंजहा–इङ्गालकम्मे वणकम्मे साडीकम्मे भाडीकम्मे फोडीकम्मे दन्तवाणिज्जे लक्खवाणिज्जे रसवाणिज्जे विसवाणिज्जे केसवाणिज्जे जन्तपीलणकम्मे निल्लञ्छणकम्मे

---

* पन्द्रह कर्मादानों की व्याख्या पन्द्रहवें बोल संग्रह में दी जायगी।

दवग्गिदावणया सरदहतलायसोसणया असईजणपोसणया। (८) तयाणन्तरं च णं अणट्ठादण्डवेरमणस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा—कन्दप्पे कुक्कुइए मोहरिए सञ्जुत्ताहिगरणे उवभोगपरिभोगाइरित्ते। (९) तयाणन्तरं च णं सामाइयस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा-मणदुप्पणिहाणे वयदुप्पणिहाणे कायदुप्पणिहाणे सामाइयस्स सइअकरणया सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया। (१०) तयाणन्तरं च णं देसावगासियस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा—आणवणप्पओगे पेसवणप्पओगे सद्दाणुवाए रूवाणुवाए बहिया पोग्गलपक्खेवे। (११) तयाणन्तरं च णं पोसहोववासस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा—अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारे अप्पमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासंथारे अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहिय उच्चारपासवणभूमी अप्पमज्जियदुप्पमज्जिय उच्चार पासवणभूमी पोसहोववासस्स सम्म अणणुपालणया। (१२) तयाणन्तरं च णं अहासंविभागस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तंजहा सचित्त निक्खेवणया सचित्त पिहणया कालाइक्कमे परववदेसे मच्छरिया। तयाणन्तरं च णं अपच्छिम मारणन्तिय संलेहणा झूसणाराहणाए पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा—इहलोगासंसप्पओगे परलोगासंसप्पओगे जीवियासंसप्पओगे मरणासंसप्पओगे कामभोगासंसप्पओगे।

बारह व्रतों के ६० अतिचारों की व्याख्या इसके प्रथम भाग बोल नं० ३०१ से ३१२ तक में और संलेखना के पाँच अतिचारों की व्याख्या बोल नं० ३१३ में दे दी गई है।

भगवान् के पास श्रावक के व्रत स्वीकार कर आनन्द

श्रावक ने भगवान् को वन्दना नमस्कार किया और इस प्रकार अर्ज करने लगा कि हे भगवन्! मैंने आपके पास अब शुद्ध सम्यक्त्व धारण की है इसलिए मुझे अब निम्न लिखित कार्य करने नहीं कल्पते- अन्यतीर्थिक, अन्यतीर्थियों के माने हुए देव, साधु आदि को वन्दना नमस्कार करना, उनके बिना बुलाये पहिले अपनी तर्फ से बोलना, आलाप संलाप करना और गुरुबुद्धि से उन्हें अशन पान आदि देना। यहाँ पर जो अशनादि दान का निषेध किया गया है सो गुरुबुद्धि की अपेक्षा से है अर्थात् सम्यक्त्व धारी पुरुष अन्यतीर्थिकों (अन्य मतावलम्बियों) द्वारा माने हुए गुरु आदि को एकान्त निर्जरा के लिए अशनादि नहीं देता। इस का अर्थ करुणा दान (अनुकम्पा दान) का निषेध नहीं है, क्योंकि विपत्ति में पड़े हुए दीन दुखी प्राणियों पर करुणा (अनुकम्पा) करके दान आदि के द्वारा उनकी सहायता करना श्रावक अपना कर्तव्य समझता है।

सम्यक्त्वधारी पुरुष अन्यतीर्थिकों द्वारा पूजित देव आदि को वन्दना नमस्कार आदि नहीं करता यह उत्सर्ग मार्ग है। अपवाद मार्ग में इस विषय के ६ आगार कहे गये हैं–

(१) राजाभियोग (२) गणाभियोग (३) बलाभियोग (४) देवाभियोग (५) गुरुनिग्रह (६) वृत्तिकान्तार।

इन * आगारों की विशेष व्याख्या इसके दूसरे भाग के छठे बोल संग्रह के बोल नं० ४५५ में दी गई है।

आनन्द श्रावक ने भगवान् से फिर अर्ज किया कि हे भगवन्! श्रमण निर्ग्रन्थों को प्रासुक और एषणीय आहार, पानी, वस्त्र, पात्रादि देना मुझे कल्पता है। तत्पश्चात् आनन्द श्रावक ने बहुत से प्रश्नोत्तर किये और भगवान् को वन्दना नमस्कार कर वापिस

* इस विषय में मूल पाठ का स्पष्टीकरण परिशिष्ट में किया जाएगा।

अपने घर आगया। घर आकर अपनी धर्मपत्नी शिवानन्दा से, कहने लगा कि हे देवानुप्रिये! मैंने आज श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये हैं। तुम भी जाओ और भगवान् को वन्दना नमस्कार कर श्राविका के व्रत अङ्गीकार करो। शिवानन्दा ने अपने स्वामी के कथनानुसार भगवान् के पास जाकर व्रत अङ्गीकार किये और श्रमणोपासिका बनी।

श्री गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान् ने फरमाया कि आनन्द श्रावक मेरे पास दीक्षा नहीं लेगा किन्तु बहुत वर्षों तक श्रावक धर्म का पालन कर सौधर्म देवलोक के अरुण विमान में चार पल्योपम की स्थिति वाले देव रूप से उत्पन्न होगा।

आनन्द श्रावक अपनी पत्नी शिवानन्दा भार्या सहित श्रमण निर्ग्रन्थों की सेवा भक्ति करता हुआ आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगा। एक समय आनन्द श्रावक ने विचार किया कि मैं भगवान् के पास दीक्षा लेने में तो असमर्थ हूँ किन्तु अब मेरे लिए यह उचित है कि ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर एकान्त रूप से धर्मध्यान में समय बिताऊँ। तदनुसार प्रातः काल अपने परिवार के सब पुरुषों के सामने ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर आनन्द श्रावक ने पौषध शाला में आकर दर्भ संस्तारक बिछाया और उस पर बैठ कर धर्माराधन करने लगा। इसके पश्चात् आनन्द श्रावक ने श्रावक की ग्यारह पडिमा * धारण की और उनका सूत्रानुसार सम्यक् प्रकार से आराधन किया।

इस प्रकार उग्र तप करने से आनन्द श्रावक का शरीर बहुत कृश (दुबला) होगया। तब आनन्द श्रावक ने विचार किया

*श्रावक की ग्यारह पडिमाओं का स्वरूप ग्यारहवें बोल संग्रह में दिया जायगा।

कि जब तक मेरे शरीर में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य्य, पुरुषाकार, पराक्रम हैं और जब तक श्रमण भगवान् महावीर स्वामी गंधहस्ती की तरह विचर रहे हैं तब तक मुझे सलेखना संथारा कर लेना चाहिए। इस प्रकार आनन्द श्रावक सलेखना संथारा कर धर्म ध्यान में समय विताने लगा। परिणामों की विशुद्धता के कारण और ज्ञानावरणीयादि कर्मों का क्षयोपशम होने से आनन्द श्रावक को अवधिज्ञान उत्पन्न होगया। जिससे पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशा में लवण समुद्र में पाँच सौ योजन तक और उत्तर में क्षुद्र हिमवान् पर्वत तक देखने लगा। ऊपर सौधर्म देवलोक और नीचे रत्नप्रभा पृथ्वी के लोलुयच्चुत नामक नरकावास को, जहाँ चौरासी हजार वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक रहते हैं, जानने और देखने लगा।

इसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वहाँ पधार गये। उनके ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति अनगार (गौतम स्वामी) बेले बेले पारणा करते हुए उनकी सेवा में रहते थे। बेले के पारणे के दिन पहले पहर में स्वाध्याय, दूसरे पहर में ध्यान करके तीसरे पहर में चञ्चलता एवं शीघ्रता रहित मन से प्रथम मुखवस्त्रिका की और बाद में वस्त्र,' पात्र आदि की पडिलेहणा की। तत्पश्चात् भगवान् की आज्ञा लेकर वाणिज्य ग्राम में गोचरी के लिए पधारे। ऊँच नीच मध्यम कुल में सामुदानिक भिक्षा करके वापिस लौट रहे थे। उस समय बहुत से मनुष्यों से ऐसा सुना कि आनन्द श्रावक पौषध शाला में सलेखना संथारा करके धर्मध्यान करता हुआ विचरता है। गौतम स्वामी आनन्द श्रावक को देखने के लिए वहाँ गये। गौतम स्वामी के दर्शन कर आनन्द श्रावक अति प्रसन्न हुआ और अर्ज की कि हे भगवन्! मेरी उठने की शक्ति

नहीं है। यदि कृपा कर आप कुछ नजदीक पधारें तो मैं मस्तक से आपके चरण स्पर्श करूँ। गौतम स्वामी के नजदीक पधारने पर आनन्द ने उनके चरण स्पर्श किये और निवेदन किया कि मुझे अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ है जिससे मैं लवण समुद्र में पाँच सौ योजन यावत् नीचे लोलुयच्युत नरकावास को जानता और देखता हूँ। यह सुन कर गौतम स्वामी ने कहा कि श्रावक को इतने विस्तार वाला अवधिज्ञान नहीं हो सकता। इसलिये हे आनन्द! तुम इस बात के लिए दण्ड प्रायश्चित्त लो। तब आनन्द श्रावक ने कहा कि हे भगवन्! क्या सत्य बात के लिए भी दण्ड प्रायश्चित्त लिया जाता है? गौतम स्वामी ने कहा– नहीं। आनन्द श्रावक ने कहा हे भगवन्! तब तो आप स्वयं दण्ड प्रायश्चित्त लीजियेगा। आनन्द श्रावक के इस कथन को सुन कर गौतम स्वामी के हृदय में शङ्का उत्पन्न हो गई। अतः भगवान् के पास आकर सारा वृत्तान्त कहा। तब भगवान् ने कहा कि हे गौतम! आनन्द श्रावक का कथन सत्य है इसलिए वापिस जाकर आनन्द श्रावक से क्षमा मांगो और इस बात का दण्ड प्रायश्चित्त लो। भगवान् के कथनानुसार गौतम स्वामी ने आनन्द श्रावक के पास जाकर क्षमा मांगी और दण्ड प्रायश्चित्त लिया।

आनन्द श्रावक ने बीस वर्ष तक श्रमणोपासक पर्याय का पालन किया अर्थात् श्रावक के व्रतों का भली प्रकार पालन किया। साठ भक्त अनशन पूर्वक अर्थात् एक महीने का संलेखना संथारा करके समाधि मरण से मर कर सौधर्म देवलोक के अरुण विमान में देव रूप से उत्पन्न हुआ। वहाँ चार पल्योपम की स्थिति पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा और उसी भव में मोक्ष प्राप्त करेगा।

(२) कामदेव श्रावक– चम्पा नगरी में जितशत्रु राजा राज्य

करता था। नगरी के अन्दर कामदेव नामक एक गाथापति रहता था। उसकी धर्मपत्नी का नाम भद्रा था। कामदेव के पास बहुत धन था। छ करोड़ सोनैये उसके खजाने में थे। छ करोड़ व्यापार में लगे हुए थे और छ करोड़ सोनैये प्रविस्तार (घर का सामान, द्विपद, चतुष्पद आदि) में लगे थे। गायों के छ गोकुल थे जिस में साठ हजार गायें थीं। इस प्रकार वह बहुत ऋद्धिसम्पन्न था। आनन्द श्रावक की तरह वह भी नगर में प्रतिष्ठित एवं राजा और प्रजा सभी के लिए मान्य था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। कामदेव भगवान् के दर्शन करने के लिए गया। आनन्द श्रावक की तरह कामदेव ने भी श्रावक के व्रत अङ्गीकार किए और धर्मध्यान करता हुआ विचरने लगा। एक दिन वह पौषधशाला में पौषध करके धर्मध्यान में लगा हुआ था। अर्द्ध रात्रि के समय एक मिथ्यादृष्टि देव कामदेव श्रावक के पास आया। उस देव ने एक महान् पिशाच का रूप बनाया। उसने आँख, कान, नाक, हाथ, अधर आदि ऐसे विशाल, विकृत और भयङ्कर बनाये कि देखने वाला भयभीत हो जाय। मुँह फाड़ रखा था। जीभ बाहर निकाल रखी थी। गले में गिरगट (किरकाटिया) की माला पहन रखी थी। चूहों की माला बना कर कन्धों पर डाल रखी थी। कानों में गहनों की तरह नेवले (नौलिया) पहने हुआ था। सर्पों की माला से उसने अपना वक्षस्थल (छाती) सजा रखा था। हाथ में तलवार लेकर वह पिशाच रूप धारी देव पौषधशाला में बैठे हुए कामदेव के पास आया। अति कुपित होता हुआ और दांतों को किटकिटाता हुआ बोला हे कामदेव! अप्रार्थिक का प्रार्थिक (जिसकी कोई इच्छा नहीं करता ऐसी मृत्यु की इच्छा करने वाला), ह्री (लज्जा), श्री

(कान्ति), धृति (धीरज) और कीर्ति से रहित, तू धर्म, पुण्य, स्वर्ग और मोक्ष की अभिलाषा रखता है। इसलिए हे कामदेव! तुझे शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत तथा पच्चक्खाण, पौषधोपवास आदि से विचलित होकर उन्हें खण्डित करना और छोड़ना नहीं कल्पता है किन्तु मैं तुझे इनसे विचलित करूँगा। यदि तूँ इनसे विचलित नहीं होगा तो इस तलवार की तीक्ष्ण धार से तेरे शरीर के टुकड़े टुकड़े कर दूँगा जिससे आर्त्त ध्यान करता हुआ अकाल में ही जीवन से अलग कर दिया जायगा। पिशाच के ये शब्द सुन कर कामदेव श्रावक को किसी प्रकार का भय, त्रास, उद्वेग क्षोभ, चञ्चलता और सम्भ्रम न हुआ किन्तु वह निर्भय होकर धर्मध्यान में स्थिर रहा। पिशाच ने दूसरी बार और तीसरी बार भी ऐसा ही कहा किन्तु कामदेव श्रावक किञ्चिन्मात्र भी विचलित न हुआ। उसे अविचलित देख कर वह पिशाच तलवार से कामदेव के शरीर के टुकड़े टुकड़े करने लगा। कामदेव इस असह्य और तीव्र वेदना को समभाव पूर्वक सहन करता रहा। कामदेव को निर्ग्रन्थ प्रवचनों में अविचलित देख कर वह पिशाच अति कुपित होकर उसे कोसता हुआ पौषधशाला से बाहर निकला। पिशाच का रूप छोड़ कर उसने एक भयङ्कर और मदोन्मत्त हाथी का रूप धारण किया। पौषधशाला में आकर कामदेव श्रावक को अपनी सूँड में उठा कर ऊपर आकाश में फेंक दिया। आकाश से वापिस गिरते हुए कामदेव को अपने तीखे दाँतों पर झेल लिया। फिर जमीन पर पटक कर पैरों से तीन बार रौंदा (मसला)। इस असह्य वेदना को भी कामदेव ने सहन किया। वह जब जरा भी विचलित न हुआ तब पिशाच ने एक भयङ्कर महाकाय सर्प का रूप धारण किया। सर्प बन कर वह कामदेव के शरीर पर चढ़ गया। गर्दन को तीन घेरों से लपेट कर

छाती में डङ्क मारा। इतने पर भी कामदेव निर्भय होकर धर्म-ध्यान में दृढ रहा। उसके परिणामों में जरा भी फर्क नहीं आया। तब वह पिशाच हार गया, दुखी तथा बहुत खिन्न हुआ। धीरे धीरे पीछे लौट कर पौषधशाला से बाहर निकला। सर्प के रूप को छोड कर अपना असली देव का दिव्य रूप धारण किया। पौषधशाला में आकर कामदेव श्रावक से इस प्रकार कहने लगा—अहो कामदेव श्रमणोपासक! तुम धन्य हो, कृत पुण्य हो, तुम्हारा जन्म सफल है। निर्ग्रन्थ प्रवचनों में तुम्हारी दृढ श्रद्धा और भक्ति है। हे देवानुप्रिय! एक समय शक्रेन्द्र ने अपने सिंहासन पर बैठ कर चौरासी हजार सामानिक देव तथा अन्य बहुत से देव और देवियों के सामने ऐसा कहा कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की चम्पानगरी में कामदेव नामक एक श्रमणोपासक रहता है। आज वह अपनी पौषधशाला में पौषध करके डाभ के संथारे पर बैठा हुआ धर्मध्यान में तल्लीन है। किसी देव, दानव और गन्धर्व में ऐसा सामर्थ्य नहीं है जो कामदेव श्रावक को निर्ग्रन्थ प्रवचनों से डिगा सके और उसके चित्त को चञ्चल कर सके। शक्रेन्द्र के इस कथन पर मुझे विश्वास नहीं हुआ। इस लिये तुम्हारी परीक्षा करने के लिये मैं यहाँ आया और तुम्हें अनेक प्रकार के परीषह उपसर्ग उत्पन्न कर कष्ट पहुँचाया, किन्तु तुम जरा भी विचलित न हुए। शक्रेन्द्र ने तुम्हारी दृढता की जैसी प्रशंसा की थी वास्तव में तुम वैसे ही हो। मैंने जो तुम्हें कष्ट पहुँचाया उसके लिये मैं क्षमा की प्रार्थना करता हूँ। मुझे क्षमा कीजिये। आप क्षमा करने के योग्य हैं। अब मैं आगे से कभी ऐसा काम नहीं करूँगा। ऐसा कह कर वह देव दोनों हाथ जोड कर कामदेव श्रावक के पैरों में गिर पडा। इस प्रकार अपने अपराध की क्षमा याचना कर वह देव

अपने स्थान को चला गया। उपसर्ग रहित होकर कामदेव श्रावक ने पडिमा (कायोत्सर्ग) को पारा अर्थात् खोला।

ग्रामानुग्राम विचरते हुए भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। कामदेव श्रावक को जब इस बात की सूचना मिली तो उसने विचार किया कि जब भगवान् यहाँ पर पधारे हैं तो मेरे लिए यह श्रेष्ठ है कि भगवान् को वन्दना नमस्कार करके वहाँ से वापिस लौटने के बाद मैं पौषध पारूँ और आहार, पानी ग्रहण करूँ। ऐसा विचार कर सभा के योग्य वस्त्र पहन कर कामदेव श्रावक भगवान् के पास पहुँचा और शंख श्रावक * की तरह भगवान् की पर्युपासना करने लगा। धर्म कथा समाप्त होने पर भगवान् ने रात्रि के अन्दर पौषधशाला में बैठे हुए कामदेव को देव द्वारा दिये गये पिशाच, हाथी और सर्प के तीन उपसर्गों का वर्णन किया और श्रमण निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को सम्बोधित करके फरमाने लगे कि हे आर्यो! जब घर में रहने वाले गृहस्थ श्रावक भी देव, मनुष्य और तिर्यञ्च सम्बन्धी उपसर्गों को समभाव पूर्वक सहन करते हैं और धर्मध्यान में दृढ रहते हैं तो द्वादशाङ्ग गणिपिटक के धारक श्रमण निर्ग्रन्थों को तो ऐसे उपसर्ग सहन करने के लिए सदा तत्पर रहना ही चाहिए। भगवान् की इस बात को सब श्रमण निर्ग्रन्थों ने विनय पूर्वक स्वीकार किया।

कामदेव श्रावक ने भी भगवान् से बहुत से प्रश्न पूछे और उनका अर्थ ग्रहण किया। अर्थ ग्रहण कर हर्षित होता हुआ कामदेव श्रावक अपने घर आया। उधर भगवान् भी चम्पा नगरी से विहार कर ग्रामानुग्राम विचरने लगे।

कामदेव श्रावक ने ग्यारह पडिमाओं का भली प्रकार पालन किया। बीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का पालन कर संलेखना संथारा

* शंख श्रावक का वर्णन इसी भाग के बोल नं० ६७४ में है।

किया। भाठ भक्त अनशन को पूरा कर अर्थात् एक मास की सलेखना कर समाधि मरण को प्राप्त हुआ और सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक महाविमान के ईशान कोण में स्थित अरुणाभ नामक विमान में उत्पन्न हुआ। वहाँ चार पल्योपम की स्थिति को पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा और उसी भव में सिद्ध, बुद्ध यावत् मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त कर मोक्ष सुख को प्राप्त करेगा।

(३) चुलनीपिता श्रावक— वाराणसी (बनारस) नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता। उसी नगरी में चुलनीपिता नाम का एक गाथापति रहता था। वह सब तरह से सम्पन्न और अपरिभूत था। उसके श्यामा नाम की धर्मपत्नी थी। चुलनीपिता के पास बहुत ऋद्धि थी। आठ करोड़ सोनैये खजाने में रखे हुए थे, आठ करोड़ व्यापार में और आठ करोड़ प्रविस्तार (धन्य धान्यादि) में लगे हुए थे। दस हजार गायों के एक गोकुल के हिसाब से आठ गोकुल थे अर्थात् उसके पास कुल अस्सी हजार गायें थीं। वह उस नगर में आनन्द श्रावक की तरह प्रतिष्ठित एवं मान्य था। एक समय भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। वह भगवान् को वन्दना नमस्कार करने गया और कामदेव श्रावक की तरह उसने भी श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये। एक समय वह पौषधोपवास कर पौषधशाला में बैठा हुआ धर्मध्यान कर रहा था। अर्द्ध रात्रि के समय उसके सामने एक देव प्रकट हुआ और कहने लगा कि यदि तूँ अपने व्रत नियमादि को नहीं भागेगा तो मैं तेरे बड़े लड़के को यहाँ लाकर तेरे सामने उसकी घात करूँगा, फिर उसके तीन टुकड़े करके उबलते हुए गर्म तेल की कड़ाही में डालूँगा और फिर उसका मांस और खून तेरे शरीर पर छिड़कूँगा जिससे

तूँ आर्तध्यान करता हुआ अकाल में ही मृत्यु को प्राप्त होगा। देव ने इस प्रकार दो बार तीन बार कहा किन्तु चुलनीपिता जरा भी भयभ्रान्त नहीं हुआ। तब देव ने वैसा ही किया। उसके बड़े लड़के को मार कर तीन टुकड़े किये। कड़ाही में उबाल कर चुलनीपिता श्रावक के शरीर को खून और मास से सींचने लगा। चुलनीपिता श्रावक ने उस असह्य वेदना को समभाव पूर्वक सहन किया। उसे निर्भय देख कर देव श्रावक के दूसरे और तीसरे पुत्र की घात कर उनके खून और मास से श्रावक के शरीर को सींचने लगा किन्तु चुलनीपिता अपने धर्म से विचलित नहीं हुआ। तब देव कहने लगा कि हे अनिष्ट क कामी चुलनीपिता श्रावक! यदि तूँ अपने व्रत नियमादि को नहीं तोड़ता है तो अब मैं तेरी देव गुरु तुल्य पूँज्य माता को तेरे घर से लाता हूँ और इसी तरह उसकी भी घात करके उसके खून और मास से तेरे शरीर को सींचूँगा। देव ने एक वक्त दो वक्त और तीन वक्त ऐसा कहा तब श्रावक देव के पूर्व कार्यों को विचारने लगा कि इसने मेरे बड़े, मझले और सब से छोटे लड़के को मार कर उनके खून और मास से मेरे शरीर को सींचा। मैं इन सब को सहन करता रहा अब यह मेरी माता भद्रा सार्थवाही, जो कि देव गुरु तुल्य पूजनीय है, उसे भी मार देना चाहता है। यह पुरुष अनार्य है और अनार्य पाप कर्मों का आचरण करता है। अब इस पुरुष को पकड़ लेना ही अच्छा है। ऐसा विचार कर वह उठा किन्तु देव तो आकाश में भाग गया। चुलनीपिता के हाथ में एक खम्भा आगया और वह ज़ोर जोर से चिल्लाने लगा। उस चिल्लाहट को सुन कर भद्रा सार्थवाही वहाँ आकर कहने लगी कि पुत्र! तुम ऐसे जोर जोर से क्यों चिल्लाते हो। तब चुलनीपिता श्रावक ने सारा वृत्तान्त अपनी माता भद्रा सार्थवाही से

कहा। यह सुन कर माता कहने लगी कि हे पुत्र! यहाँ भी पुरुष तुम्हारे किसी भी पुत्र को घर से नहीं लाया और न कोई मारता ही है। किसी पुरुष ने तुम्हें यह उपसर्ग दिया है। तेरी ऐसी हुई घटना मिथ्या है। क्रोध के कारण उस हिंसक और पाप बुद्धि वाले पुरुष को पकड़ने के लिए तुम उठे। प्रवृत्ति हुई है इसलिए तुम्हारा स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत का भङ्ग हुआ है। पौषध व्रत में स्थित श्रावक को सापराधी और निरपराधी दोनों तरह के प्राणियों की हिंसा का त्याग होता है। असावधानी पूर्वक दौड़ने से पौषध का और क्रोध के आने से उत्तर गुण (नियम) का भी भङ्ग हुआ है। इसलिए हे पुत्र! अब तुम दण्ड प्रायश्चित्त लेकर अपनी आत्मा को शुद्ध करो।

चुलनीपिता श्रावक ने अपनी माता की बात को विनय पूर्वक स्वीकार किया और आलोचना कर स्वयं प्रायश्चित्त लिया।

चुलनीपिता श्रावक ने आनन्द श्रावक की तरह श्रावक की ग्यारह पडिमाएं अङ्गीकार कीं और सूत्र के अनुसार उनका यथावत् पालन किया। अन्त में कामदेव श्रावक की तरह समाधि मरण को प्राप्त कर सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक विमान के ईशान कोण में अरुणप्रभ विमान में देव रूप से उत्पन्न हुआ। वहाँ चार पल्योपम की आयुष्य पूरी करके महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा और उसी भव में मोक्ष जायगा।

(४) सुरादेव श्रावक— बनारस नाम की नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगरी में सुरादेव नामक एक गाथापति रहता था। उसके पास अठारह करोड़ सोनैयों की सम्पत्ति थी और छः गायों के गोकुल थे। उसके धन्या नाम की धर्मपत्नी थी। एक समय वहाँ पर भगवान महावीर स्वामी पधारे। सुरादेव ने भगवान् के पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार किए।

एक समय सुरादेव पौषध करके पौषधशाला में बैठा हुआ धर्मध्यान म तल्लीन था। अर्द्ध रात्रि के समय उसके सामने एक देव प्रकट हुआ और सुरादेव से बोला कि यदि तू अपने व्रत नियमादि को नहीं तोडेगा तो मैं तेरे बडे बेटे को मार कर उसके शरीर के पाँच टुकडे करके उबलते हुए तेल की कडाही में डाल दूँगा और फिर उसके मास और खून से तेरे शरीर को सींचूँगा जिससे तू आर्तध्यान करता हुआ अकाल मरण प्राप्त करेगा। इसी प्रकार मझले और छोटे लडके के लिए भी कहा और वैसा ही किया किन्तु सुरादेव जरा भी विचलित न हुआ। प्रत्युत उस असह्य वेदना को सहन करता रहा। सुरादेव श्रावक को अविचलित देख कर वह देव इस प्रकार कहने लगा कि हे अनिष्ट के कामी सुरादेव! यदि तू अपने व्रत नियमादि को भङ्ग नहीं करेगा तो मैं तेरे शरीर में एक ही साथ (१) श्वास (२) काम (३) ज्वर (४) दाह (५) कुक्षिशूल (६) भगन्दर (७) अर्श (बवासीर) (८) अजीर्ण (६) दृष्टिरोग (१०) मस्तकशूल (११) अरुचि (१२) अक्षिवेदना (१३) कर्णवेदना (१४) खुजली (१५) पेट का रोग और (१६) कोढ, ये सोलह रोग डाल दूँगा जिससे तू तडप तडप कर अकाल में ही प्राण छोड देगा।

इतना कहने पर भी सुरादेव श्रावक भयभीत न हुआ। तब देव ने दूसरी बार और तीसरी बार भी ऐसा ही कहा। तब सुरादेव श्रावक को विचार आया कि यह पुरुष अनार्य मालूम होता है। इसे पकड़ लेना ही अच्छा है। ऐसा विचार कर वह उठा किन्तु देव तो आकाश में भाग गया, उसके हाथ में एक खम्भा आ गया जिसे पकड कर वह कोलाहल करने लगा। तब उसकी स्त्री धन्या आई और उससे सारा वृत्तान्त सुन कर सुरादेव से कहने लगी कि हे आर्य! आपके तीनों लडके आनन्द

में हैं। किसी पुरुष ने आपको यह उपसर्ग किया है। आपके व्रत नियम आदि भङ्ग हो गए हैं। अतः आप दण्ड प्रायश्चित्त लेकर अपनी आत्मा को शुद्ध करो। तब सुरादेव श्रावक ने व्रत नियम आदि भङ्ग होने का दण्ड प्रायश्चित्त लिया।

अन्तिम समय में संलेखना द्वारा समाधि मरण प्राप्त कर सौधर्म कल्प में अरुण कान्त विमान में देव रूप में उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की आयु पूरी करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा और वहाँ से उसी भव में मोक्ष जायगा।

(५) चुल्ल शतक श्रावक– आलम्भिका नामक नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगरी में चुल्लशतक (क्षुद्रशतक) नाम का एक गाथापति रहता था। वह बड़ा धनाढ्य सेठ था। उसके पास अठारह करोड़ सोनैये थे और गायों के छः गोकुल थे। उसकी भार्या का नाम बहुला था। एक समय श्रमण भगवान् महावीर वहाँ पधारे। चुल्लशतक ने आनन्द श्रावक की तरह श्रावक के व्रत अङ्गीकार किए। एक समय वह पौषधशाला में पौषध करके धर्मध्यान में स्थित था। अर्द्धरात्रि के समय एक देव उसके सामने प्रकट हुआ। हाथ में तलवार लेकर वह चुल्लशतक श्रावक से कहने लगा कि यदि तू अपने व्रत नियमादि का भङ्ग नहीं करेगा तो मैं तेरे बड़े लड़के को तेरे सामने घात करूँगा और उसके सात टुकड़े करके उबलते हुए तेल की कड़ाही में डाल कर खून और मांस से तेरे शरीर को सींचूँगा। इसी तरह दूसरे और तीसरे लड़के के लिये भी कहा और वैसा ही किया किन्तु चुल्लशतक श्रावक धर्मध्यान से विचलित न हुआ तब देव ने उससे कहा कि तेरे अठारह करोड़ सोनैयों को घर से लाकर आलम्भिका नगरी के मार्गों और चौराहों में बिखेर दूँगा। देव ने दूसरी और तीसरी बार भी

इसी तरह कहा, तब श्रावक को विचार आया कि यह पुरुष अनार्य है इसे पकड़ लेना चाहिए। ऐसा विचार कर वह सुरादेव श्रावक की तरह उठा। देव के चले जाने से खम्भा हाथ में आगया। तत्पश्चात् उसकी भार्या ने चिल्लाने का कारण पूछा। सब वृत्तान्त सुन कर उसने चुल्लशतक को दण्ड प्रायश्चित्त लेने के लिए कहा। तदनुसार उसने दण्ड प्रायश्चित्त लेकर अपनी आत्मा को शुद्ध किया।

अन्त में संलेखना कर समाधि मरण पूर्वक देह त्याग कर सौधर्म कल्प में अरुणसिद्ध विमान में देव रूप से उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की स्थिति पूर्ण करके वह महाविदेह क्षेत्र में जन्म ले कर मोक्ष प्राप्त करेगा।

(६) कुण्डकोलिक श्रावक— कम्पिलपुर नगर में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगर में कुण्डकोलिक गाथापति रहता था। उसके पास अठारह करोड़ सोनैयों की सम्पत्ति थी और गायों के छः गोकुल थे। वह नगर में प्रतिष्ठित एवं मान्य था। एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। कुण्ड-कोलिक गाथापति दर्शनार्थ गया और आनन्द श्रावक की तरह उसने भी भगवान् के पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार किए।

एक समय कुण्डकोलिक श्रावक दोपहर के समय अशोकवन में पृथ्वीशिलापट्ट (पत्थर की चौकी) की ओर आया। स्वनामाङ्कित मुद्रिका और दुपट्टा उतार कर शिला पर रख दिया और धर्म-ध्यान में लग गया। ऐसे समय में उसके सामने एक देव प्रकट हुआ और उसकी मुद्रिका और दुपट्टा उठा कर आकाश में खड़ा होकर इस प्रकार कहने लगा कि हे कुण्डकोलिक श्रावक! मंखलि-पुत्र गोशालक की धर्मप्रज्ञप्ति सुन्दर (हितकर) है क्योंकि उसके मत में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार, पराक्रम कुछ भी नहीं

हैं। सब पदार्थ नियत हैं। श्रमण भगवान महावीर स्वामी की धर्मप्रज्ञप्ति सुन्दर नहीं है, क्योंकि उसमें उत्थानादि सब कर्म हैं और नियत कुछ भी नहीं है। देव के ऐसा कहने पर कुण्डकोलिक श्रावक ने उससे पूछा कि हे देव! जैसा तुम कहते हो यदि वैसा ही है तो बतलाओ यह दिव्य ऋद्धि, दिव्य कान्ति और दिव्य देवानुभाव (अलौकिक प्रभाव) तुम्हें कैसे प्राप्त हुए हैं? क्या बिना ही पुरुषार्थ किये ये सब चीजें तुम्हें प्राप्त हो गई हैं? देव— हे देवानुप्रिय! यह दिव्य ऋद्धि, कान्ति आदि सब पदार्थ मुझे पुरुषार्थ एवं पराक्रम किए बिना ही प्राप्त हुए हैं

कुण्डकोलिक—हे देव! यदि तुम्हें ये सब पदार्थ बिना ही पुरुषार्थ किए मिल गए हैं तो जिन जीवों में उत्थान, पुरुषार्थ आदि नहीं हैं ऐसे वृक्ष, पाषाण आदि देव क्यों नहीं हो जाते अर्थात् जब देवऋद्धि प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थ की आवश्यकता नहीं है तो एकेन्द्रिय आदि समस्त जीवों को देवऋद्धि प्राप्त हो जानी चाहिए। यदि यह ऋद्धि तुम्हें पुरुषार्थ से प्राप्त हुई है तो फिर तुम्हारा यह कहना कि मंखलिपुत्र गोशालक की "उत्थान आदि नहीं हैं। समस्त पदार्थ नियत हैं।" यह धर्मप्रज्ञप्ति अच्छी है और श्रमण भगवान् महावीर की "उत्थान आदि हैं। पदार्थ केवल नियत नहीं हैं" यह प्ररूपणा ठीक नहीं है। इत्यादि तुम्हारा कथन मिथ्या है। क्योंकि उत्थान आदि फल की प्राप्ति में कारण हैं। प्रत्येक फल की प्राप्ति के लिए क्रिया की आवश्यकता रहती है।

कुण्डकोलिक श्रावक के इस युक्ति पूर्ण उत्तर को सुन कर उस देव के हृदय में शंका उत्पन्न हो गई कि गोशालक का मत ठीक है या भगवान् महावीर का? वाद विवाद में पराजित हो जाने के कारण उसे आत्मग्लानि भी पैदा हुई। वह देव कुण्डकोलिक

श्रावक को कुछ भी अन्तर देने में समर्थ नहीं हुआ। इसलिए श्रावक की स्वनामाङ्कित मुद्रिका और दुपट्टा जहाँ से उठाया था उस शिला पट्ट पर रख कर स्वस्थान को चला गया।

उस समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वहाँ पधारे। भगवान का आगमन सुन कर कुण्डकोलिक बहुत प्रसन्न हुआ और भगवान् के दर्शन करने के लिए गया। भगवान् ने उस देव और कुण्डकोलिक के बीच जो प्रश्नोत्तर हुए उनका जिक्र कर कुण्डकोलिक से पूछा कि क्या यह बात सत्य है? कुण्डकोलिक ने उत्तर दिया कि हे भगवन्! जैसा आप फरमाते हैं वैसी ही घटना मेरे साथ हुई है। तब भगवान् सब श्रमण निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को बुला कर फरमाने लगे कि गृहस्थाश्रम में रहते हुए गृहस्थ भी अन्य यूथिकों को अर्थ, हेतु, प्रश्न और युक्तियों से निरुत्तर कर सकते हैं तो हे आर्यो! द्वादशाङ्ग का अध्ययन करने वाले श्रमण निर्ग्रन्थों को तो उन्हें (अन्ययूथिकों को) हेतु और युक्तियों से अवश्य ही निरुत्तर करना चाहिए।

सब श्रमण निर्ग्रन्थों ने भगवान् के इस कथन को विनय के साथ तहत्ति (तथेति) कह कर स्वीकार किया।

कुण्डकोलिक श्रावक को व्रत, नियम, शील आदि का पालन करते हुए चौदह वर्ष व्यतीत होगये। जब पन्द्रहवा वर्ष बीत रहा था तब एक समय कुण्डकोलिक ने अपने घर का भार अपने ज्येष्ठ पुत्र को सौंप दिया और आप धर्मध्यान में समय बिताने लगा। सूत्रोक्त विधि से श्रावक की ग्यारह पडिमाओं का आराधन किया। अन्तिम समय में संलेखना कर सौधर्म कल्प के अरुणध्वज विमान में देवपने से उत्पन्न हुआ। वहाँ से चव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जायगा।

(७) सद्दालपुत्र श्रावक— पोलासपुर नगर में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगर में सद्दालपुत्र (सकडालपुत्र) नामक एक कुम्हार रहता था। वह आजीविक (गोशालक) मत का अनुयायी था। गोशालक के सिद्धान्तों का प्रेम और अनुराग उसकी रग रग में भरा हुआ था। गोशालक का सिद्धान्त ही अर्थ है, परमार्थ है दूसरे सब अनर्थ हैं, ऐसी उसकी मान्यता थी। सद्दालपुत्र श्रावक के पास तीन करोड सोनैयों की सम्पत्ति थी। दस हजार गायों का एक गोकुल था। उसकी पत्नी का नाम अग्निमित्रा था। पोलासपुर नगर के बाहर सद्दालपुत्र की पाँच सौ दूकानें थीं। जिन पर बहुत से नौकर काम किया करते थे। वे जल भरने के घड़े, छोटी घड़लियाँ, कलश (बड़े बड़े माटे) सुराही, कुंजे आदि अनेक प्रकार के मिट्टी के बरतन बना कर बेचा करते थे।

एक दिन दोपहर के समय वह अशोक वन में जाकर धर्मध्यान में स्थित था। इसी समय एक देव उसके सामने प्रकट हुआ। वह कहने लगा कि त्रिकाल ज्ञाता, केवल ज्ञान और केवल दर्शन के धारक, अरिहन्त, जिन, केवली महामाहण कल यहाँ पधारेंगे। अतः उनको वन्दना करना, भक्ति करना तथा पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि के लिए विनति करना तुम्हारे लिए योग्य है। दो तीन बार ऐसा कह कर देव वापिस अपने स्थान को चला गया। देव का कथन सुन कर सद्दालपुत्र विचारने लगा कि मेरे धर्माचार्य मंखलिपुत्र गोशालक ही उपरोक्त गुणों से युक्त महामाहण हैं। वे ही कल यहाँ पधारेंगे।

दूसरे दिन प्रातः काल श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। नगर निवासी लोग वन्दना करने के लिये निकले। महामाहण का आगमन सुन सद्दालपुत्र विचारने लगा कि भगवान् महावीर स्वामी यहाँ पधारे हैं तो मैं भी उन्हें वन्दना नमस्कार करने

जाऊँ। ऐसा विचार कर स्नान कर सभा में जाने योग्य वस्त्र पहन कर सहस्राम्रवन उद्यान में भगवान् को वन्दना नमस्कार करने के लिए गया। भगवान् ने धर्मकथा कही। इसके बाद सद्दालपुत्र से उस देव के आगमन की बात पूछी। सद्दालपुत्र ने कहा-हाँ भगवन्! आपका कथन यथार्थ है। कल एक देव ने मेरे से ऐसा ही कहा था। तब भगवान् ने फरमाया कि उस देव ने मंखलिपुत्र गोशालक को लक्षित कर ऐसा नहीं कहा था। भगवान् की बात सुन कर सद्दालपुत्र विचारने लगा कि भगवान् महावीर ही सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, महामाहण हैं। पीठ फलक, शय्या, संस्तारक के लिए मुझे उनसे विनति करनी चाहिए। ऐसा विचार कर उसने भगवान् से विनति की कि पोलासपुर नगर के बाहर मेरी पाँच सौ दूकानें हैं। वहाँ से पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक लेकर आप विचरें। भगवान् महावीर ने उसकी प्रार्थना को सुना और यथावसर सद्दालपुत्र की पाँच सौ दूकानों में से पीठ फलक आदि लेकर विचरने लगे।

एक दिन सद्दालपुत्र अपनी अन्दर की शाला में से गीले मिट्टी के बर्तन निकाल कर सुखाने के लिए धूप में रख रहा था। तब भगवान् ने सद्दालपुत्र से पूछा कि ये बर्तन कैसे बने हैं? सद्दालपुत्र-भगवन्! पहले मिट्टी लाई गई। उस मिट्टी में राख आदि मिलाए गए और पानी से भीगो कर वह खूब गूंदी गई। जब मिट्टी बर्तन बनाने के योग्य होगई, तब उसे चाक पर रख कर ये बर्तन बनाये गए हैं।

भगवान्-हे सद्दालपुत्र! ये बर्तन उत्थान, बल, वीर्य, पुरुषाकार आदि से बने हैं या बिना ही उत्थान आदि के बने हैं?

सद्दालपुत्र- ये बर्तन उत्थान पुरुषाकार पराक्रम के बिना ही बन गये हैं क्योंकि उत्थानादि तो हैं ही नहीं। सब पदार्थ

नियत (होनहार) से ही होते हैं।

भगवान्– सद्दालपुत्र ! यदि कोई पुरुष तुम्हारे इन बर्तनों को चुरा ले, फेंक दे, फोड़ दे अथवा तुम्हारी अग्निमित्रा भार्या के साथ मनमाने कामभोग भोगे तो उस पुरुष को तुम क्या दण्ड दोगे?

सद्दालपुत्र– भगवन् ! मैं उस पुरुष को बुरे भले शब्दों से उलाहना दूँ, डंडे से मारूँ, रस्सी से बाँध दूँ और यहाँ तक कि उसके प्राण भी ले लूँ।

भगवान्– सद्दालपुत्र ! तुम्हारी मान्यता के अनुसार तो न कोई पुरुष तुम्हारे बर्तन चुराता है, फेंकता है या फोड़ता है और न कोई तुम्हारी अग्निमित्रा भार्या के साथ काम भोग भोगता है किन्तु जो कुछ होता है वह सब भवितव्यता से ही हो जाता है। फिर तुम उस पुरुष को दण्ड क्यों देते हो? इसलिए तुम्हारी यह मान्यता कि 'उत्थान आदि कुछ नहीं है सब भवितव्यता से ही हो जाता है' मिथ्या है।

भगवान् के इस कथन से सद्दालपुत्र को बोध हो गया। भगवान के पास धर्मोपदेश सुन कर उसने आनन्द श्रावक की तरह श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये। तीन करोड़ मोहरें और एक गोकुल रखा। भगवान् को वन्दना नमस्कार कर सद्दालपुत्र वापिस अपने घर आकर अग्निमित्रा भार्या को सब वृत्तान्त कहा। फिर अग्निमित्रा भार्या से कहने लगा कि हे देवानुप्रिये! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे हैं। अतः तुम भी जाओ और श्रावक के व्रत अङ्गीकार करो। अग्निमित्रा भार्या ने अपने पति की बात को स्वीकार किया। सद्दालपुत्र ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को (नौकरों को) एक श्रेष्ठ रथ जोत कर लाने की आज्ञा दी जिस में तेज चलने वाले, एक समान खुर और पूँछ वाले एक ही रंग के तथा जिनके सींग अनेक रंगों से रंगे हुए हों ऐसे

बैल जुड़े हुए हों, जिसका धोंसरा बिल्कुल सीधा, उत्तम और अच्छी बनावट वाला हो। आज्ञा पाकर नौकरों ने शीघ्र ही वैसा रथ लाकर उपस्थित किया। अग्निमित्रा भार्या ने स्नान आदि करके उत्तम वस्त्र पहने और अल्प भार एवं बहुमूल्य वाले आभूषणों से शरीर को अलंकृत कर बहुत सी दासियों को साथ लेकर रथ पर सवार हुई। सहस्राम्र वन में आकर रथ से नीचे उतरी। भगवान् को वन्दना नमस्कार कर खड़ी खड़ी भगवान् की पर्युपासना करने लगी। भगवान् का धर्मोपदेश सुन कर अग्नि-मित्रा भार्या ने श्राविका के व्रत स्वीकार किये। फिर भगवान् को वन्दना नमस्कार कर वह वापिस अपने घर चली आई। भगवान् पोलासपुर से विहार कर अन्यत्र विचरने लगे। जीवा-जीवादि नव तत्त्वों का ज्ञाता श्रावक बन कर सद्दालपुत्र भी धर्म ध्यान में समय बिताने लगा।

मखलिपुत्र गोशालक ने जब यह वृत्तान्त सुना कि सद्दालपुत्र ने आजीविक मत को त्याग कर निर्ग्रन्थ श्रमण का मत अङ्गीकार किया है तो उसने सोचा "मैं जाऊँ और आजीविकोपासक सद्दालपुत्र को निर्ग्रन्थ श्रमण मत का त्याग करवा कर फिर आजीविक मत का अनुयायी बनाऊँ" ऐसा विचार कर अपनी शिष्य मण्डली सहित वह पोलासपुर नगर में आया। आजीविक सभा में अपने भण्डोपकरण रख कर अपने कुछ शिष्यों को साथ लेकर सद्दालपुत्र श्रावक के पास आया। गोशालक को आते देख सद्दालपुत्र श्रावक ने किसी प्रकार का आदर सत्कार नहीं किया किन्तु चुपचाप बैठा रहा। तब पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि लेने के लिये भगवान् महावीर के गुणग्राम करता हुआ गोशालक बोला— हे देवानुप्रिय! क्या यहाँ महामाहण पधारे थे?
सद्दालपुत्र— आप किस महामाहण के लिए पूछ रहे हो?

गोशालक– श्रमण भगवान् महावीर महामाहण के लिये।
सद्दालपुत्र– किस अभिप्राय से आप श्रमण भगवान् महावीर को महामाहण कहते हैं?
गोशालक– हे सद्दालपुत्र! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी केवलज्ञान, केवलदर्शन के धारक है। वे इन्द्र नरेन्द्रों द्वारा महित एवं पूजित हैं। इसी अभिप्राय से मैं कहता हूँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी महामाहण है।
गोशालक–सद्दालपुत्र! क्या यहाँ महागोप (प्राणियों के रक्षक) पधारे थे?
सद्दालपुत्र–आप किसके लिए महागोप शब्द का प्रयोग कर रहे हो?
गोशालक– श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के लिए।
सद्दालपुत्र– आप किस अभिप्राय से श्रमण भगवान् महावीर को महागोप कहते हैं?
गोशालक– संसार रूपी विकट अटवी में प्रवचन से भ्रष्ट होने वाले, प्रति क्षण मरने वाले, मृग आदि डरपोक योनियों में उत्पन्न होकर सिंह व्याघ्र आदि से खाये जाने वाले, मनुष्य आदि श्रेष्ठ योनियों में उत्पन्न होकर युद्ध आदि में कटने वाले तथा भाले आदि से बींधे जाने वाले, चोरी आदि करने पर नाक कान आदि काट कर अंग हीन बनाए जाने वाले तथा अन्य अनेक प्रकार के दुःख और त्रास पाने वाले प्राणियों को धर्म का स्वरूप समझा कर अत्यन्त एवं अव्याबाध सुख के स्थान मोक्ष में पहुँचाने वाले श्रमण भगवान महावीर हैं। इस अभिप्राय से मैं उनको महागोप कहा है।
गोशालक– सद्दालपुत्र! क्या यहाँ महासार्थवाह पधारे थे?
सद्दालपुत्र– आप किसको महासार्थवाह कहते हैं?
गोशालक–श्रमण भगवान् महावीर को मैं महासार्थवाह कहता हूँ।

सद्दालपुत्र– किस अभिप्राय से आप श्रमण भगवान् महावीर को महासार्थवाह कहते हैं ?

गोशालक– श्रमण भगवान् महावीर स्वामी संसार रूपी अटवी में नष्ट भ्रष्ट यावत् विलुप्त किये जाने वाले बहुत से जीवों को धर्म का मार्ग बता कर उनका संरक्षण करते हैं और मोक्ष रूपी महा नगर के सन्मुख करते हैं। इस लिए भगवान् महावीर स्वामी महासार्थवाह हैं।

गोशालक– देवानुप्रिय ! क्या यहाँ महा धर्मकथी (धर्मोपदेशक) पधारे थे ?

सद्दालपुत्र– आप महाधर्मकथी शब्द का प्रयोग किसके लिए कर रहे हैं ?

गोशालक– महाधर्मकथी शब्द का प्रयोग श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के लिए है।

सद्दालपुत्र– श्रमण भगवान् महावीर को आप महाधर्मकथी किस अभिप्राय से कहते हैं ?

गोशालक– संसार रूपी विकट अटवी में मिथ्यात्व के उदय से सुमार्ग को छोड़ कर कुमार्ग (असन्मार्ग) में गमन करने वाले कर्मों के वश संसार में चक्कर खाने वाले प्राणियों को धर्मकथा कह कर यावत् प्रतिबोध देकर चार गति रूप संसार से पार लगाने वाले श्रमण भगवान महावीर स्वामी हैं। इस लिए उन्हें महाधर्मकथी (धर्म के महान् उपदेशक) कहा है।

गोशालक– सद्दालपुत्र ! क्या यहाँ महानिर्यामक पधारे थे ?

सद्दालपुत्र– आप महानिर्यामक किसे कहते हैं ?

गोशालक– श्रमण भगवान महावीर स्वामी को।

सद्दालपुत्र– श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को आप किस अभिप्राय से महानिर्यामक कहते हैं ?

गोशालक–संसार रूपी महान् समुद्र में नष्ट होने वाले, डूबने वाले, बारम्बार गोते खाने वाले तथा बहने वाले बहुत से जीवों को धर्म रूपी नौका से निर्वाण रूपी किनारे पर पहुँचाने वाले श्रमण भगवान् महावीर हैं। इस लिए उन्हें महानिर्यामक कहा है।

फिर सद्दालपुत्र श्रावक मंखलिपुत्र गोशालक से इस प्रकार कहने लगा कि हे देवानुप्रिय! आप अवसरज्ञ (अवसर को जानने वाले) हैं और वाणी में बड़े चतुर हैं। क्या आप मेरे धर्माचार्य्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर के साथ विवाद (शास्त्रार्थ) करने में समर्थ हैं?

गोशालक– नहीं।

सद्दालपुत्र– देवानुप्रिय! आप इस प्रकार इन्कार क्यों करते हैं? क्या आप भगवान् महावीर के साथ शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हैं?

गोशालक– जैसे कोई बलवान् पुरुष किसी बकरे, मेंढे, सूअर, मुर्गे, तीतर, बटेर, लावक, कबूतर, कौआ, बाज आदि पक्षी को उसके हाथ, पैर, खुर, पूँछ, पंख, बाल आदि जिस किसी जगह से पकड़ता है वह वहीं उसे निश्चल और निःस्पन्द करके दबा देता है। जरा भी इधर उधर हिलने नहीं देता है। इसी प्रकार श्रमण भगवान् महावीर से मैं जहाँ कहीं कुछ प्रश्न करता हूँ अनेक हेतुओं और युक्तियों से वे वहीं मुझे निरुत्तर कर देते हैं। इसलिए मैं तुम्हारे धर्माचार्य्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हूँ।

तब सद्दालपुत्र श्रमणोपासक ने गोशालक से कहा कि आप मेरे धर्माचार्य्य के यथार्थ गुणों का कीर्तन करते हैं। इसलिए मैं आपको पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि देता हूँ किन्तु कोई धर्म या तप समझ कर नहीं। इसलिए आप मेरी दूकानों पर से पीठ, फलक शय्या आदि ले लीजिए। सद्दालपुत्र

—

श्रावक की बात सुन कर गोशालक उसकी दूकानों से पीठ फलक आदि लेकर विचरने लगा। जब गोशालक हेतु और युक्तियों से, प्रतिबोधक वाक्यों से और अनुनय विनय से सद्दालपुत्र श्रावक को निर्ग्रन्थ प्रवचनों से चलाने में समर्थ नहीं हुआ तब श्रान्त, उदास और ग्लान (निराश) होकर पोलासपुर नगर से निकल कर अन्यत्र विचरने लगा।

व्रत, नियम, पौषधोपवास आदि का सम्यक् पालन करते हुए सद्दालपुत्र को चौदह वर्ष बीत गये। पन्द्रहवां वर्ष जब चल रहा था तब एक समय सद्दालपुत्र पौषध करके पौषधशाला में धर्मध्यान कर रहा था। अर्द्ध रात्रि के समय उसके सामने एक देव प्रकट हुआ। चुलनीपिता श्रावक की तरह सद्दालपुत्र को भी उपसर्ग दिये। उसके तीनों पुत्रों की घात कर उनके नौ नौ टुकड़े किए और उनके खून और मांस से सद्दालपुत्र के शरीर को सींचा। इतना होने पर भी जब सद्दालपुत्र निर्भय बना रहा तब देव ने चौथी वक्त कहा कि यदि तू अपने व्रत नियम आदि को नहीं तोड़ेगा तो मैं तेरी धर्मसहायिका (धर्म में सहायता देने वाली) धर्म वैद्य (धर्म को सुरक्षित रखने वाली), धर्म के अनुराग में रंगी हुई, तेरे सुख दु:ख में समान सहायता देने वाली अग्निमित्रा भार्य्या को तेरे घर से लाकर तेरे सामने उसकी घात कर उसके खून और मांस से तेरे शरीर को सींचूंगा। देव के दो वार तीन वार यही बात कहने पर सद्दालपुत्र श्रावक के मन में विचार आया कि यह कोई अनार्य पुरुष है। इसे पकड़ लेना ही अच्छा है। पकड़ने के लिए ज्यों ही सद्दालपुत्र उठा त्यों ही देव तो आकाश में भाग गया और उसके हाथ में खम्भा आगया। उसका कोलाहल सुन उसकी अग्निमित्रा भार्या वहाँ आई और सारा वृत्तान्त सुन कर उसने सद्दालपुत्र श्रावक से

दण्ड प्रायश्चित्त लेने के लिए कहा। तदनुसार दण्ड प्रायश्चित्त लेकर सद्दालपुत्र श्रावक ने अपनी आत्मा को शुद्ध किया।

सद्दालपुत्र अन्तिम समय में संलेखना द्वारा समाधिमरण पूर्वक काल करके पहले देवलोक के अरुणभूत विमान में उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की स्थिति पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा और वहीं से उसी भव में मोक्ष जायगा।

(८) महाशतक श्रावक-राजगृह नगर में श्रेणिक राजा राज्य करता था। उसी नगर में महाशतक नाम का एक गाथापति रहता था। वह नगर में मान्य एवं प्रतिष्ठित था। कांसी के बर्तन विशेष से नापे हुए आठ करोड़ सोनैया उसके खजाने में थे, आठ करोड़ व्यापार में लगे हुए थे और आठ करोड़ घर-बिखेर आदि में लगे हुए थे। गायों के आठ गोकुल थे। उसके रेवती आदि तेरह सुन्दर स्त्रियाँ थीं। रेवती के पास उसके पीहर से दिए हुए आठ करोड़ सोनैया और गायों के आठ गोकुल थे। शेष बारह स्त्रियों के पास उनके पीहर से दिए हुए एक एक करोड़ सोनैया और एक एक गोकुल था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। आनन्द श्रावक की तरह महाशतक ने भी श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये। कांसी के बर्तन से नापे हुए चौबीस करोड़ सोनैया और गायों के आठ गोकुल (अस्सी हजार गायों) की मर्यादा की। रेवती आदि तेरह स्त्रियों के सिवाय अन्य स्त्रियों से मैथुन का त्याग किया। उसने ऐसा भी अभिग्रह लिया कि प्रति दिन दो द्रोण (६४ सेर) वाली, सोने से भरी हुई कांसी की, पात्री से व्यापार करूँगा, इस से अधिक नहीं। श्रावक के व्रत अङ्गीकार कर महाशतक श्रावक धर्मध्यान से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ रहने लगा।

एक बार अर्द्धरात्रि के समय कुटुम्ब जागरणा करती हुई रेवती गाथापत्नी को ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि इन बारह सौतों के होने से मै महाशतक गाथापति के साथ मनमाने काम भोग नहीं भोग सकती हूँ। अतः यही अच्छा है कि शस्त्र, अग्नि या विष का प्रयोग करके सौतों को मार दिया जाय जिससे इनका सारा धन भी मेरे हाथ लग जायगा और फिर मै अपनी इच्छानुसार महाशतक गाथापति के साथ कामभोग भी भोग सकूँगी ऐसा सोच कर वह कोई अवसर ढूंढने लगी। मौका पाकर उसने छः सौतो को विष देकर और छः को शस्त्र द्वारा मार डाला। उनके धन को अपने अधिकार में करके महाशतक गाथापति के साथ यथेच्छ काम भोग भोगने लगी। मांस में लोलुप, मूर्च्छित एवं गृद्ध बनी हुई रेवती अनेक तरीकों से तले हुए और भूंजे हुए मांस के सोले आदि बना कर खाने लगी और यथेच्छ शराब पीने लगी।

एक समय राजगृह नगर में अमारी (हिंसाबन्दी) की घोषणा हुई। तब मांस लोलुपा रेवती ने अपने पीहर के नौकरों को बुलाकर कहा कि तुम प्रति दिन मेरे पीहर वाले गोकुल में से दो गाय के बछड़ा को मार कर मेरे लिए यहाँ ले आया करो। रेवती की आज्ञानुसार नौकर लोग दो बछड़ा को मार कर प्रति दिन लाने लगे। इस प्रकार प्रचुर मांस मदिरा का सेवन करती हुई रेवती समय बिताने लगी।

श्रावक के व्रत नियमों का भली प्रकार पालन करते हुए महाशतक के चौदह वर्ष बीत गए। तत्पश्चात् वह आनन्द श्रावक की तरह ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर पौषधशाला में आकर धर्मध्यान पूर्वक समय बिताने लगा। उसी समय मांस लोलुपा रेवती मद्य मांस की उन्मत्तता और कामुकता के

भाव दिखलाती हुई पौषधशाला में महाशतक श्रावक के पास आ पहुँची। वहाँ पहुँच कर मोह और उन्माद को उत्पन्न करने वाले शृङ्गार भरे हाव भाव और कटाक्ष आदि की भावों को दिखाती हुई महाशतक को लक्ष्य करके बोली— तुम बड़े धर्म-कामी, पुण्यकामी, स्वर्गकामी, मोक्षकामी, धर्म की आकांक्षा करने वाले, धर्म के प्यासे बन बैठे हो। तुम्हें धर्म, पुण्य, स्वर्ग और मोक्ष से क्या करना है? तुम मेरे साथ मन चाहे काम-भोग क्यों नहीं भोगते हो? तात्पर्य यह है कि धर्म, पुण्य आदि सुख के लिए ही किए जाते हैं और विषय भोग से बढ़ कर दूसरा कोई सुख नहीं है। इसलिए तपस्या आदि झंझटों को छोड़ कर मेरे साथ यथेच्छ काम भोग भोगो। रेवती गाथापत्नी के इस प्रकार दो तीन बार कहने पर भी महाशतक श्रावक ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया किन्तु मौन रह कर धर्म ध्यान में लगा रहा। महाशतक श्रावक द्वारा किसी प्रकार का आदर सत्कार न पाकर रेवती गाथापत्नी अपने स्थान को वापिस चली गई।

इसके बाद महाशतक ने श्रावक की ग्यारह पडिमाएं स्वीकार की और सूत्रोक्त विधि से यथावत् पालन किया। इस प्रकार कठिन और दुष्कर तप करने से महाशतक का शरीर अति कृश होगया। इसलिए मारणान्तिक संलेखना कर धर्मध्यान में तल्लीन होगया। शुभ अध्यवसाय के कारण और अवधि ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से महाशतक श्रावक को अवधिज्ञान उत्पन्न होगया। वह पूर्व दिशा में लवण समुद्र के अन्दर एक हजार योजन तक जानने और देखने लगा। इसी तरह दक्षिण और पश्चिम में भी लवण समुद्र में एक हजार योजन तक जानने और देखने लगा। उत्तर में चुल्लहिमवन्त पर्वत तक जानने और देखने लगा। नीची दिशा में रत्नप्रभा पृथ्वी में लोलुपच्चुत नरक तक जानने और

देखने लगा। इसी समय रेवती गाथापती कामोन्मत्त होकर पौषधशाला में आई और महाशतक श्रावक को कामभोगों के लिए आमन्त्रित करने लगी। उसके दो तीन बार ऐसा कहने पर महाशतक श्रावक को क्रोध आगया। अवधिज्ञान से उपयोग लगा कर उसने रेवती से कहा कि तू सात रात्रि के भीतर भीतर अलस (विषूचिका) रोग से पीड़ित हो कर आर्त्तध्यान करती हुई असमाधिमरण पूर्वक यथासमय काल करके रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे लोलुयच्चुत नरक में ८४ हजार वर्ष की स्थिति से उत्पन्न होगी।

महाशतक श्रावक के इस कथन को सुन कर रेवती विचारने लगी कि महाशतक अब मुझ पर कुपित हो गया है और मेरा बुरा चाहता है। न जाने यह मुझे किस बुरी मौत से मरवा डालेगा। ऐसा सोच कर वह डरी। क्षुब्ध और भयभीत होती हुई धीरे धीरे पीछे हट कर वह पौषधशाला से बाहर निकली। घर आकर उदासीन हो वह सोच में पड़ गई। तत्पश्चात् रेवती के शरीर में भयङ्कर अलस रोग उत्पन्न हुआ और तीव्र वेदना प्रकट हुई। आर्त्तध्यान करती हुई यथासमय काल करके रत्नप्रभा पृथ्वी के लोलुयच्चुत नरक में चौरासी हजार वर्ष की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न हुई।

ग्रामानुग्राम विहार करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी राजगृह नगर में पधारे। भगवान् अपने ज्येष्ठ शिष्य गौतम स्वामी से कहने लगे कि राजगृह नगर में मेरा शिष्य महाशतक श्रावक पौषधशाला में संलेखना कर बैठा हुआ है। उसने रेवती से सत्य किन्तु अप्रिय वचन कहे हैं। भक्त पान का पच्चक्खाण कर मारणान्तिकी संलेखना करने वाले श्रावक को जो बात सत्य (तथ्य) हो किन्तु दूसरे को अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय लगे ऐसा वचन बोलना नहीं कल्पता। अतः तुम जाओ और महाशतक

श्रावक से कहो कि इस विषय की आलोचना कर यथायोग्य प्रायश्चित्त स्वीकार करें।

भगवान् के उपरोक्त कथन को स्वीकार कर गौतम स्वामी महाश्रावक आनन्द के पास पधारे। आनन्द ने उन्हें वन्दना नमस्कार किया। बाद में गौतम स्वामी के कथनानुसार भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य कर आलोचना पूर्वक यथायोग्य दण्ड प्रायश्चित्त लिया।

महाश्रावक आनन्द ने बीस वर्ष पर्यन्त श्रावक पर्याय का पालन किया। अन्तिम समय में एक महीने की सलेखना कर समाधि मरण पूर्वक काल कर सौधर्म देवलोक के अरुणाभसक विमान में चार पल्योपम की स्थिति वाला देव हुआ। वहाँ से चव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा और वहीं से उसी भव में मोक्ष जायगा।

(९) नन्दिनीपिता श्रावक—श्रावस्ती नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उसी नगरी में नन्दिनीपिता नामक एक धनाढ्य गाथापति रहता था। उसके चार करोड़ सोनैया खजाने में, चार करोड़ व्यापार में और चार करोड़ विस्तार में लगे हुए थे। गायों के चार गोकुल थे अर्थात् चालीस हजार गायें थीं। उसकी धर्मपत्नी का नाम अश्विनी था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। आनन्द श्रावक की तरह नन्दिनीपिता ने भी भगवान् के पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये और धर्मध्यान करते हुए आनन्द पूर्वक रहने लगा।

श्रावक के व्रत नियमों का भली प्रकार पालन करते हुए नन्दिनीपिता को चौदह वर्ष बीत गये। जब पन्द्रहवाँ वर्ष चल रहा था तब ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सौंप दिया और स्वयं पौषधशाला में जाकर धर्मध्यान में तल्लीन रहने लगा।

बीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का पालन कर अन्तिम समय में सलेखना की। समाधि मरण पूर्वक आयुष्य पूरा कर सौधर्म देवलोक के अरुणगव नामक विमान में उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की स्थिति पूरी करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होकर सिद्धगति को प्राप्त होगा।

(१०) शालेयिकापिता श्रावक– श्रावस्ती नगरी मे जितशत्रु राजा राज्य करता था। उसी नगरी म शालेयिकापिता नामक एक धनाढ्य गाथापति रहता था। उसके चार करोड सोनैया खजाने में थे, चार करोड व्यापार में और चार करोड विस्तार में लगे हुए थे। गायों के चार गोकुल थे। उसकी पत्नी का नाम फाल्गुनी था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। शालेयिकापिता ने आनन्द श्रावक की तरह भगवान् के पास श्रावक के व्रत ग्रहण किये और धर्मध्यान पूर्वक समय बिताने लगा। चौदह वर्ष बीत जाने के पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर पौषधशाला में जाकर धर्मध्यान मे तल्लीन रहने लगा। बीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का भली प्रकार पालन किया। अन्तिम समय में सलेखना कर के समाधि मरण को प्राप्त हुआ। सौधर्म देवलोक के अरुणकील नामक विमान में देवरूप से उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की स्थिति पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा और उसी भव में मोक्ष जायगा। शेष सारा अधिकार आनन्द श्रावक के समान है।

दस ही श्रावकों ने चौदह वर्ष पूरे करके पन्द्रहवें वर्ष में कुटुम्ब का भार अपने अपने ज्येष्ठ पुत्र को सम्भला दिया और स्वय विशेष धर्म साधना में लग गये। सभी ने बीस बीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का पालन किया।

परिशिष्ट

उपासकदशांग के आनन्दाध्ययन में नीचे लिखा पाठ आया है—"नो खलु मे भंते कप्पइ अज्जप्पभिइं अन्नउत्थिए वा, अन्नउत्थियदेवयाणि वा, अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि वा वंदित्तए वा नमंसित्तए वा" इत्यादि।

अर्थात्—हे भगवन्! मुझे आज से लेकर अन्य यूथिक, अन्य यूथिक के देव अथवा अन्य यूथिक के द्वारा सम्मानित या गृहीत को वन्दना नमस्कार करना नहीं कल्पता। इस जगह तीन प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं—

(क) अन्न उत्थिय परिग्गहियाणि।

(ख) अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि चेइयाइं।

(ग) अन्न उत्थियपरिग्गहियाणि अरिहंत चेइयाइं।

विवाद का विषय होने के कारण इस विषय में प्रति तथा पाठों का खुलासा नीचे लिखे अनुसार है—

(क) 'अन्न उत्थियपरिग्गहियाणि' यह पाठ बिब्लोथिका इण्डिका कलकत्ता द्वारा ई० सन् १८९० में प्रकाशित [illegible] अनुवादसहित उपासकदशांग सूत्र में है। इसका अनुवाद और संशोधन डाक्टर ए० एफ० रुडल्फ हार्नल पी एच० डी० ट्यूबिंजन फैलो आफ कलकत्ता युनिवर्सिटी ऑनररी फाइलालाजिकल सेक्रेट्री टू दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल ने किया है। उन्होंने टिप्पणी में पांच प्रतियों का उल्लेख किया है जिनका नाम A B C D और E रक्खा है। A B और D में (क) पाठ है। C और E में (ग)

हार्नल साहब ने 'चेइयाइं' और 'अरिहंतचेइयाइं' दोनों प्रकार के पाठ को प्रक्षिप्त माना है। उनका कहना है— 'देवयाणि' और 'परिग्गहियाणि' पदों में सूत्रकार ने द्वितीया के बहुवचन में 'णि' प्रत्यय लगाया है। 'चेइयाइं' में 'इं' होने से मालूम पड़ता है कि यह शब्द बाद में किसी दूसरे का डाला हुआ है। हार्नले साहब ने पांचों प्रतियों का परिचय इस प्रकार दिया है—

(A) यह प्रति इण्डिया आफिस लाइब्रेरी कलकत्ते में है। इसमें ४० पन्ने हैं प्रत्येक पन्ने में १० पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्ति में ३८ अक्षर हैं। इस पर संवत् १२६४ सावन सुदी १४ का समय दिया हुआ है। प्रति प्रायः शुद्ध है।

(B) यह प्रति बंगाल एशियाटिक सोसाइटी की लाइब्रेरी में है। बीकानेर महाराजा के भण्डार में रक्खी हुई पुरानी प्रति की यह नकल है। यह नकल सोसाइटी ने गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया के बीच में पड़ने पर की थी। सोसाइटी जिस प्रति की नकल करवाना चाहती था भारत सरकार द्वारा प्रकाशित बीकानेर भण्डार की

सूची में उसका १२३३ नम्बर है। सूची में उसका समय १११७ तथा उस के साथ उपासकदशाविवरण नाम की टीका का होना भी बताया गया है। सोसाइटी की प्रति पर फागुन सुदी ९, गुरुवार स० १८२४ दिया हुआ है। इस में कोई टीका भी नहीं है। केवल गुजराती टब्बा अर्थ है। उस प्रति का प्रथम और अंतिम पत्र बीच की पुस्तक के साथ मेल नहीं खाता। अन्तिम पृष्ठ टीका वाली प्रति का है। सूची में दिया गया विवरण इन पृष्ठों में मिलता है। इस से मालूम पड़ता है कि सोसाइटी के लिए किसी दूसरी प्रति की नकल हुई है। १११७ सम्वत् उस प्रति के लिखने का नहीं किन्तु टीका के बनाने का मालूम पड़ता है। यह प्रति बहुत सुन्दर लिखी हुई है। इसमें ८३ पन्ने हैं। प्रत्येक पन्ने में छ पंक्तियां और प्रत्येक पंक्ति में २८ अक्षर हैं। साथ में टब्बा है।

(C) यह प्रति कलकत्ते में एक यति के पास है। इसमें ४१ पन्ने हैं। मूल पाठ बीच में लिखा हुआ है और संस्कृत टीका ऊपर तथा नीचे। इसमें सम्वत् १९१६ फागुन सुदी ४ दिया हुआ है। यह प्रति शुद्ध और किसी विद्वान् द्वारा लिखी हुई मालूम पड़ती है अन्त में बताया गया है कि इस में ८१२ श्लोक मूल के और १०१६ टीका के हैं।

(D) यह भी उन्हीं यतिजी के पास है। इसमें ३३ पन्ने हैं। ९ पंक्ति और ४८ अक्षर हैं इस पर मिगसर बदी ५, शुक्रवार सम्वत् १७४५ दिया हुआ है। इसमें टब्बा है। यह श्री रैनी नगर में लिखी गई है।

(E) यह प्रति मुर्शिदाबाद वाले राय धनपतिसिंहजी द्वारा प्रकाशित है।

इनके सिवाय श्री अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, (बीकानेर का प्राचीन पुस्तक भण्डार जो कि पुराने किले में है) में उपासक दशांग की दो प्रतियां हैं। उन दोनों में 'अन्नउत्थिपरिग्गहियाणि चेइआइं' पाठ है। पुस्तकों का परिचय F और G के नाम से नीचे दिया जाता है—

(F) लाइब्रेरी पुस्तक न० ६४६७ (उवासग सूत्र) पन्ने २४, एक पृष्ठ में १३ पंक्तियां, एक पंक्ति में ४२ अक्षर, अहमदाबाद श्रावक गच्छ श्री गुडापार्श्वनाथ की प्रति पुस्तक में सवत् नहीं है। चौथे पत्र में नीचे लिखा पाठ है अन्न उत्थियपरिग्ग० हियाइ वा चेइयाइ'। पत्र के बाईं तरफ शुद्ध किया हुआ है अन्नउत्थियाइ वा अन्नउत्थियदेवयाइ वा' पुस्तक अधिकतर अशुद्ध है। बाद में शुद्ध की गई है श्लोक संख्या ६१२ दी है।

(G) लाइब्रेरी पुस्तक नं० ६४६४ (उपासकदशावृत्ति पंच पाठ सह) पत्र ६३, श्लोक ६००, टीका ग्रन्थाग्र ९००, प्रत्येक पृष्ठ पर १६ पंक्तियां और प्रत्येक पंक्ति में ३२ अक्षर हैं। पत्र आठवें पंक्ति पहली में नीचे लिखा पाठ है—

अन्न उत्थियपरिग्गहियाइ वा चेइयाई। यह पुस्तक पडिमात्रा में लिखी गई है और अधिक प्राचीन मालूम पड़ती है। पुस्तक पर सम्वत् नहीं है।

परिशिष्ट

उपासकदशांग के आनन्दाध्ययन में नीचे लिखा पाठ आया है—"नो खलु मे भंते कप्पइ अज्जप्पभिइ अन्नउत्थिए वा, अन्नउत्थियदेवयाणि वा, अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि वा वंदित्तए वा नमंसित्तए वा" इत्यादि।

अर्थात्—हे भगवन्! मुझे आज से लेकर अन्य यूथिक, अन्य यूथिक के देव अथवा अन्य यूथिक के द्वारा सम्मानित या गृहीत को वन्दना नमस्कार करना नहीं कल्पता। इस जगह तीन प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं—

(क) अन्न उत्थिय परिग्गहियाणि।

(ख) अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि चेइयाइं।

(ग) अन्न उत्थियपरिग्गहियाणि अरिहंत चेइयाइं।

विवाद का विषय होने के कारण इस विषय में प्रति तथा पाठों का खुलासा नीचे लिखे अनुसार है—

[क] 'अन्न उत्थियपरिग्गहियाणि" यह पाठ बिब्लोथिका इण्डिका, कलकत्ता द्वारा ई० सन् १८९० में प्रकाशित अर्ध जो अनुवादसहित उपासकदशांग सूत्र में है। इसका अनुवाद और संशोधन डाक्टर ए० एफ्० रुडल्फ हार्नल पी-एच० डी० ट्यूबिंजन, फेलो आफ कलकत्ता युनिवर्सिटी ऑनररी फाइलोलोजिकल सेक्रेट्री टू दी एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल ने किया है। उन्होंने टिप्पणी में पाँच प्रतियों का उल्लेख किया है जिन का नाम A B C D और E रक्खा है। A B और D में (ख) पाठ है। C और E में (ग)

हार्नल साहब ने 'चेइयाइं' और 'अरिहंतचेइयाइं' दोनों प्रकार के पाठ को प्रक्षिप्त माना है। उनका कहना है— 'देवयाणि' और 'परिग्गहियाणि' पदों में सूत्रकार ने द्वितीया के बहुवचन में 'णि' प्रत्यय लगाया है। 'चेइयाइं' में 'इं' होने से मालूम पड़ता है कि यह शब्द बाद में किसी दूसरे का डाला हुआ है। हार्नल साहब ने पाँचों प्रतियों का परिचय इस प्रकार दिया है—

(A) यह प्रति इण्डिया आफिस लाइब्रेरी कलकत्ते में है। इसमें ४० पन्ने हैं प्रत्येक पन्ने में १० पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्ति में ३८ अक्षर हैं। इस पर संवत् १५६४, श्रावण सुदी १४ का समय दिया हुआ है। प्रति प्रायः शुद्ध है।

(B) यह प्रति बंगाल एसियाटिक सोसाइटी की लाइब्रेरी में है। बीकानेर महाराजा के भण्डार में रक्खी हुई पुरानी प्रति की यह नकल है। यह नकल सोसाइटी ने गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया के बीच में पड़ने पर की थी। सोसाइटी जिस प्रति की नकल करवाना चाहती थी भारत सरकार द्वारा प्रकाशित बीकानेर भण्डार की

सूची में उसका १२३३ नम्बर है। सूची में उसका समय १११७ तथा उस के साथ उपासकदशाविवरण नाम की टीका का होना भी बताया गया है। सोसाइटी की प्रति पर फागुन सुदी १, गुरुवार सं० १८२४ दिया हुआ है। इस में कोई टीका भी नहीं है। केवल गुजराती टब्बा अर्थ है। उस प्रति का प्रथम और अंतिम पत्र बीच की पुस्तक के साथ मेल नहीं खाता। अन्तिम पृष्ठ टीका वाली प्रति का है। सूची में दिया गया विवरण इन पृष्ठों में मिलता है। इस से मालूम पड़ता है कि सोसाइटी के लिए किसी दूसरी प्रति की नकल हुई है। १११७ सम्वत् उस प्रति के लिखने का नहीं किन्तु टीका के बनाने का मालूम पड़ता है। यह प्रति बहुत सुन्दर लिखी हुई है। इसमें ८३ पन्ने हैं। प्रत्येक पन्ने में ६ पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्ति में २८ अक्षर हैं। साथ में टब्बा है।

(C) यह प्रति कलकत्ते में एक यति के पास है। इसमें ४१ पन्ने हैं। मूल पाठ बीच में लिखा हुआ है और संस्कृत टीका ऊपर तथा नीचे। इसमें सम्वत् १६१६ फागुन सुदी ४ दिया हुआ है। यह प्रति शुद्ध और किसी विद्वान् द्वारा लिखी हुई मालूम पड़ती है अन्त में बताया गया है कि इस में ८१२ श्लोक मूल के और १०१६ टीका के हैं।

(D) यह भी उन्हीं यतिजी के पास है। इसमें ३३ पन्ने हैं। ६ पंक्ति और ४८ अक्षर हैं इस पर मिगसर बदी ५, शुक्रवार सम्वत् १७४५ दिया हुआ है। इसमें टब्बा है। यह भी रैनी नगर में लिखी गई है।

(E) यह प्रति मुर्शिदाबाद वाले राय धनपतिसिंहजी द्वारा प्रकाशित है।

इनके सिवाय श्री अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, (बीकानेर का प्राचीन पुस्तक भण्डार जो कि पुराने किले में है) में उपासक दशांग की दो प्रतियाँ हैं। उन दोनों में 'अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि चेइआई' पाठ है। पुस्तकों का परिचय F और G के नाम से नीचे दिया जाता है—

(F) लाइब्रेरी पुस्तक नं० १४६७ (उवासग सुत्र) पन्ने २४, एक पृष्ठ में १३ पंक्तियाँ, एक पंक्ति में ४२ अक्षर, अहमदाबाद खरतर गच्छ श्री सुपार्श्वनाथ की प्रति पुस्तक में संवत् नहीं है। चौथे पत्र में नीचे लिखा पाठ है अन्न उत्थियपरिग्गहियाइ वा चेइयाइ'। पत्र के बांई तरफ शुद्ध किया हुआ है अन्नउत्थियाइ वा अन्नउत्थियदेवयाइ वा' पुस्तक अधिकतर अशुद्ध है। बाद में शुद्ध की गई है श्लोक संख्या ८१२ दी है।

(G) लाइब्रेरी पुस्तक नं० १४६४ (उपासकदशावृत्ति पंच पाठ सह) पत्र ३३, श्लोक ८००, टीका ग्रन्थाग्र ९००, प्रत्येक पृष्ठ पर १६ पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्ति में ३२ अक्षर हैं। पत्र आठवें पंक्ति पहली में नीचे लिखा पाठ है—

अन्न उत्थियपरिग्गहियाई वा चेइयाई। यह पुस्तक पडिमात्रा में लिखी गई है और अधिक प्राचीन मालूम पड़ती है। पुस्तक पर सम्वत्...